अमरीकी विदेश मंत्री की भारत यात्रा

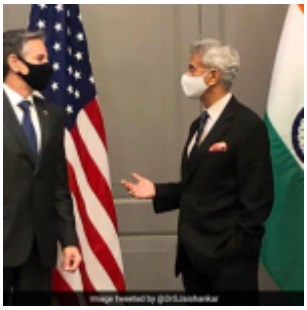

यह कोई विचित्र संयोग नहीं है कि अमेरिका के विदेश मंत्री भारत आए हुए हैं और पाकिस्तान के विदेश मंत्री चीन गए हुए हैं। दोनों का मकसद एक-जैसा ही है। दोनों चाहते हैं कि अफगानिस्तान में खून की नदियां न बहें और दोनों का वहां वर्चस्व बना रहे। अमेरिका चाहता है कि इस लक्ष्य की पूर्ति में भारत उसकी मदद करे और पाकिस्तान चाहता है कि चीन उसकी मदद करे। हम पहले चीन को लें। चीन को तालिबान से क्या शिकायत है? उसे कौनसा डर है? उसे डर यह है कि यदि काबुल पर तालिबान का कब्जा हो गया तो चीन का सिंक्यांग (शिनच्यांग) प्रांत उसके हाथ से निकल सकता है। वहां पिछले कई दशकों से पूर्वी तुर्किस्तान आंदोलन चल रहा है।

वहां के उइगर मुसलमानों ने पहले च्यांग काई शेक और फिर माओ त्से तुंग की नाक में भी दम कर रखा था। वे अपना स्वतंत्र इस्लामी राष्ट्र चाहते हैं। माना जाता है कि चीनी सरकार ने लगभग 10 लाख उइगर मुसलमानों को अपने यातना-शिविरों में कैद कर रखा है। लगभग 10 साल पहले जब मैं इस प्रांत की राजधानी उरुमची में गया था तो उइगरों की बदहाली देखकर मैं दंग रह गया था। चीन को लग रहा था कि यदि काबुल में तालिबान आ गए तो वे चीन के विरुद्ध जिहाद छेड़ देंगे और कई अमेरिकापरस्त इस्लामी राष्ट्र उनका साथ दे देंगे। इसीलिए चीन ने तालिबान नेताओं को पेइचिंग बुलवाकर उनसे कहलवा लिया कि उइगर आंदोलन से उनका कुछ लेना-देना नहीं है।

लेकिन इसके बावजूद पाकिस्तानी विदेश मंत्री शाह महमूद कुरैशी और चीनी विदेश मंत्री वांग यी के संयुक्त बयान में कहा गया है कि उनके दोनों देश मिलकर अफगान-संकट के शांतिपूर्ण समाधान की कोशिश करेंगे। गृहयुद्ध को रोकेंगे। पूर्वी तुर्किस्तान मुस्लिम आंदोलन और अफगानिस्तान के आतंकवाद को रोकेंगे। जान-बूझकर इस बयान में तालिबान का नाम नहीं लिया गया है, क्योंकि पाकिस्तान बड़ी दुविधा में है। हालांकि तालिबान उसी का पनपाया हुआ पेड़ है लेकिन उसको डर है कि काबुल में उनके आते ही लाखों अफगान शरणार्थी पाकिस्तान में डेरा डाल लेंगे।

तालिबान जरा मजबूत हुए नहीं कि वे पेशावर पर अपना दावा ठोक सकते हैं। इसके अलावा यदि बातचीत से मामला हल नहीं हुआ तो अफगानिस्तान में खून की नदियां बहेंगी। पिछले दो माह में लगभग 2500 अफगान मारे जा चुके हैं। सैकड़ों अफगान फौजी डर के मारे पहले ताजिकिस्तान और अब पाकिस्तान में जाकर छिप गए हैं। अमेरिका और चीन, दोनों ही अपने-अपने दांव चल रहे हैं। लेकिन पाकिस्तान जैसे चीन का पिछलग्गू बना हुआ है, वैसे भारत अमेरिका का नहीं बन सकता। इस वक्त भारत को अपने कदम बहुत फूंक-फूंककर रखने होंगे। अमेरिका लाख चाहे लेकिन भारत को अपनी

फौजें काबुल नहीं भेजनी हैं। अमेरिका उजबेक और ताजिक हवाई अड्डों का इस्तेमाल करके गनी सरकार की मदद करना चाहे तो जरुर करे लेकिन बेहतर यही होगा कि काबुल में एक सर्वदलीय कामचलाऊ सरकार बने और चुनाव द्वारा भविष्य में उसकी लोकतांत्रिक राजनीति चले।